॥ हरि:ॐ ॥

देवासुर संग्राम

(अनुभव प्रसंग)

पूज्य श्रीमोटा

अनुवादक + संपादन :

रजनीभाई बर्मावाला 'हरि:ॐ'

हरि:ॐ आश्रम प्रकाशन, सूरत

© हरि:ॐ आश्रम, सुरत–३९५००५

❑ प्रकाशक : हरि:ॐ आश्रम, कुरुक्षेत्र महादेव मंदिर के पास,
जहाँगीरपुरा, सुरत–३९५००५.
दूरभाष : (०२६१) २७६५५६४, २७७१०४६
E-mail : hariommota1@gmail.com
Website : www.hariommota.org

❑ संस्करण : प्रथम प्रत–१०००

❑ मूल्य : ₹. ..../- (.... रुपये)

❑ प्राप्तिस्थान : (१) हरि:ॐ आश्रम, सुरत–३९५००५.
(२) हरि:ॐ आश्रम,
पो. बो. नं. ७४, नडियाद–३८७००१.
फोन : (०२६८) २५६७७९४

❑ अक्षरांकन : दुर्गा प्रिन्टरी,
अवनिकापार्क सोसायटी, खानपुर,
अहमदाबाद–३८०००१.
फोन : (०७९) २५५०२६२३

❑ मुद्रक : साहित्य मुद्रणालय प्रा. लि.
सिटी मिल कम्पाउन्ड,
कांकरीया रोड, अहमदाबाद–३८००२२.
फोन : (०७९) २५४६९१०१

॥ हरि:ॐ ॥

• निवेदन •

(प्रथम संस्करण)

मुमुक्षु-जीवों को भगवत्प्राप्ति के मार्ग में आगे बढ़ने के लिए ब्रह्मचर्यशक्ति अत्यंत आवश्यक है। साधना के उच्चतर क्षेत्रों में जो संग्राम आते हैं, उन पर विजय प्राप्त करने के लिए ब्रह्मचर्यशक्ति ही सहायरूप होती है। इस शक्ति को प्राप्त करने के लिए पूज्य श्रीमोटाने अपनी ब्रह्मचर्य साधना के प्रसंगों का वर्णन कुछ निमित्त रूप से किया था, जो ध्वनिमुद्रित हो सका था। उस ध्वनिमुद्रित वाणी की हस्तप्रत हमारे ट्रस्टीमंडल के ट्रस्टी श्री रजनीभाई बर्मावालाने तैयार की थी, जो 'हरिभाव' में प्रगट हुई थी। उसकी अलग पुस्तिका की माग के कारण इस प्रकार की साधना विषय पूरक लेख शामिल करके यह पुस्तिका प्रगट की है।

डॉ. रमेशभाई भट्ट (Ph.D.)ने पू. श्रीमोटा की इस पुस्तिका में प्रगट हुए अनुभव के बारे में भूमिकारूप से लिखा है, वह भी ऐसी घटना को स्वीकार करने में सहायरुप होगा।

पिछले कुछ वर्षों से बिनगुजराती साधकों की संख्या बहुत बढ़ी है, वे ऐसे साहित्य से लाभान्वित होकर प्रभुप्राप्ति के मार्ग में आगे बढ़े ऐसी हमारी शुभेच्छा है।

इस पुस्तिका का मुद्रणकार्य मे. साहित्य मुद्रणालय प्रा. लि., अहमदाबाद के श्री श्रेयसभाई पंड्याने पू. श्रीमोटा के प्रति अपना आदरभाव व्यक्त करते सेवाभाव से निःशुल्क कर दिया है, उसके लिए हम उनके बहुत-बहुत आभारी हैं।

– ट्रस्टीमंडल

दि. २५-१२-२०१३ हरि:ॐ आश्रम, सुरत

॥ हरिःॐ ॥

• रहस्यमय प्रक्रिया •

पू. श्रीमोटाने अपने जीवन को फलीभूत होने देने के लिए तात्पर्य की परमात्मा का अनुभव पाने के लिए कठ़ोर साधना की है। ऐसी साधना के कुछ तबकाओं का वर्णन आपश्रीने निमित्तयोग से किया और प्रगट भी हुआ है । इसके उपरांत साधना के दूसरे अनेक प्रकार और तबकाओं हैं उसका वर्णन आपश्रीने नहीं किया था, क्योंकि ऐसे प्रकार की साधना को यथार्थरूप से स्वीकार कर सके या समझ सके ऐसी भूमिका वर्तमान समाज के मानस में नहीं है ।

फिर भी निमित्त मिलते आपश्री को योग्य लगा वैसा और उतने प्रमाण में अपने से हुई गुप्त साधना का वर्णन भी किया था । उसमें ब्रह्मचर्य की साधना परिपक्व होने के लिए की साधना के विषय में आपश्रीने जो वर्णन किया है, इससे इस प्रकार की साधना में कैसे विघ्न, कठिनाईयाँ आते और श्रीसद्गुरु की सहाय मिलते कैसे परिणाम अनुभव में आते हैं, उसकी हमें प्रतीति हो ।

जीवन की अखडंता और परिपूर्णता का निश्चित ध्येय का अनुभव करने के लिए हेतु को हृदय में स्पष्ट और दृढ़ करके आपश्री से साधना हुई थी । दिन दरमियान प्राप्त कर्म को निरहंकार भाव से करते (प्रभु-प्रीत्यर्थ से) और रात्रि में स्मशानवास करके अपने को समय-समय पर सहज प्राप्त होते साधनों का अभ्यास करते ।

साधना दरमियान अलग-अलग वृत्तिओं के हमले होते, उन्हें रोकने भक्तिभाव से पुरुषार्थ होता । ऐसी वृत्तिओं में अत्यंत वेगवान और बलवान कामवासना को शांत करने प्रथम साधनरूप आपश्रीने जो प्रयोग किया था, उसका वर्णन प्रारंभ के पन्ने पर है। उस प्रयोग से कामवासना शांत हुई थी। पूर्वकर्म के तथा वातावरण में रहे संस्काररूपी विचार और वृत्तियाँ चित्तमें संग्रहित होते हैं । साधना दरमियान पूज्य श्रीमोटा की निरंतर जाग्रति होते हुए भी शांतभाव से पड़े संस्कार किस तरह साधक पर हमला करते हैं, उस प्रसंग का वर्णन श्रीमोटाने किया है ।

कामवासना के अचानक हुए हमले समय में आपश्रीने चित्त की एकाग्र-शांत अवस्था और साथ-साथ कामवासना का आवेग ये दोनों के बीच एक प्रकार का आंतरिक जबरा सूक्ष्म संग्राम पैदा करता है । इस संग्राम को पूज्य श्रीमोटाने देवासुर संग्राम जैसा पहचान कराया । देवत्व की शुद्ध अवस्था को नोचने का प्रयत्न करती आसुरी यानी कि विरोधी वृत्ति के सामने दृढ़ रहकर उसे रोकने का आंतरिक पुरुषार्थ का यह संग्राम साधक के सिवा दूसरा कोई पूर्णरुप से नहीं समझ सकता । इससे, इस प्रसंग के वर्णन का मूल्य पूज्य श्रीमोटा की साधनावस्था के संदर्भ में ही समझना है । हमारी जीवदशा की कक्षा में वह न आ जाय उसके लिए वाचकरूप से हमें सावध रहना है ।

पूज्य श्रीमोटा हरिद्वार के कुंभ मेले में श्रीसद्गुरु की प्रत्यक्ष सहाय के लिए गये और सब हकीकत श्रीसद्गुरु को बताई और आपश्रीन`जो विधि की ये सभी हकीकत बहुत गहन है। तदुपरांत उसी रात में गंगामैया के प्रवाह में खड़े रहकर जो साधन का अभ्यास करने का सूचित किया, उस समय दरमियान देवीयाँरूप जो शक्ति प्रगट हुई और पूज्य श्रीमोटा के साथ जो चेष्टा ही वह अत्यंत रहस्यमय है । साधक के विकास में उस अमुक अवस्था प्राप्त होती है, उसके बाद भी आकस्मिक रीति से किस प्रकार का संस्कार उदय होकर उसे अस्वस्थ करने मथते है वह अगर कोई श्रेयार्थी सोचे और समझे तो इससे जीवन में एक पल के लिए भी गाफिल नहीं रह सकते । पूज्य श्रीमोटाने इस समग्र घटना का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। इसका तात्पर्य तो साधनामार्ग पर जानेवाले श्रेयार्थी को अखंड जाग्रत रहने के लिए चिताने को ही हो सकता है ।

● ● ●

दूसरी बाबत इन्द्रिय की शल्यक्रिया के बारे में है। इसका अनुभव पूज्य श्रीमोटाकी साधना दरमियान बना हुआ है । जब कि यह प्रसंग १९३९ में परमात्मा का साक्षात्कार - अनुभव पश्चात् का है। इस समय अंतर को पाठकों को विशेष ध्यान में रखने जैसा है । एसी शल्यक्रिया हो ऐसे सोच के पीछे अपने संपर्क में आनेवाले लोग पूज्य श्रीमोटा के बारे में कुछ अन्यथा सोच न करे ऐसा था । पूज्य श्रीमोटा के विचार

भाव के पीछे संपर्क में आनेवाले का कल्याण ही सूचित है, क्योंकि अनुभवी पुरुषों के दिव्यकर्म का सूक्ष्म विज्ञान ऐसा है कि यदि संपर्क में आनेवाला व्यक्ति अनुभवी पुरुष के बारे में हीन या नकारात्मका या शंकाजनक विचार करे तो, अनुभवी पुरुष स्वयं ऐसे विचार स्वीकार नहीं करता होने से और कुछ संग्रह न करता होने से वे सभी— वृत्ति–भाव पुनः ऐसा सोचनेवाले व्यक्ति को नुकसान पहुँचाता है ।

उपरांत श्रीसद्‌गुरुने लाक्षणिक रीति से पूज्य श्रीमोटा की शल्यक्रिया की उसका वर्णन अत्यंत गूढ़ और रहस्यमय है । उसे उसी तरह से स्वीकार कर के कोई भी अर्थघटन में उतरने की आवश्यकता नहीं है । आध्यात्मिक उच्चोच्य कक्षा में ऐसी घटना भी शक्य है, इसे श्रेयार्थी को स्वीकार करना ही रहा ।

● ● ●

पूज्य श्रीमोटा को आयुष्य के अंतिम वर्षों में प्रोस्टेट ग्लेन्ड वृद्धि हुई थी । पौरुषग्रंथि बड़ी होते पेशाब में अवरोध थता अत्यंत पीड़ा होत है और शल्यक्रिया से ही उसे दूर कर सकते हैं । पूज्य श्रीमोटाने इसके लिए शल्यक्रिया कराने का सतत इन्कार किया था और इस पीड़ा को साक्षीभाव से सहन करते थे । अनुभवी के ऐसे रूख का मूल्यांकन जीवदसावालों को नहीं करना चाहिए । पूज्य श्रीमोटाने कहा था कि ऐसी वेदनाकारी अवस्था यह तो श्रीभगवान की प्रसादी है । इस प्रसादी को कूचल नहीं सकते । पूज्य श्रीमोटा का पेशाब पूरा रुक गया था । स्वैच्छिक देहत्याग पहले केथेटर रखकर पेशाब बाहर निकाला था । देहत्याग पहले शरीर पर के सभी उपकरण— माला, चश्मा आदि दूर कराये थे, फिर केथेटर दूर करने का आपश्रीने मना की थी और उसे 'जीवनसंगीनी' रूप बताई थी । यह तथ्य भी यौगिक प्रक्रिया में गूढ एवं रहस्यमय है ।

इस पुस्तिका की ऐसी रहस्यमय प्रक्रिया परमत्मा की प्रगट और प्रत्यक्ष प्रतीति के लिए है और हम सब में भक्तिभाव प्रगट होने और बढ़ाने के लिए है ऐसी दृष्टि हमारे लिए कल्याणकारक मान सकते हैं ।

— रमेश भट्ट

दि. २६–१०–२००१ (विजयादशमी)

॥ हरि:ॐ ॥

• सूचि •

१. ब्रह्मचर्य की साधना ....

२. दैवासुर संग्राम ....

३. अद्‌भुत अनुभव ....

४. प्रभु की प्रसादी ....

“मैं सर्वत्र विद्यमान हूँ”

– मोटा

॥ हरिःॐ ॥

१. ब्रह्मचर्य की साधना

किसी अनुभवी ने कहा कि ब्रह्मचर्य को परिपक्व होने के लिए या ब्रह्मचर्च का यथायोग्य रूप से पालन हो, स्वाभाविक हो जाय उसके लिए अमुक प्रकार की साधना आवश्यक है। हृदय में हृदय से जब भाव प्रगट होता है तब सभी प्राकृतिक हकीकत गौण बन जाती है। हमारे दिल में भाव चेतनपूर्ण प्रगट होता है, तब प्राण की, प्रकृति की निम्न हकीकत विषय सब गौण हो जाते हैं। यह वास्तविकता होते हुए भी साधना के अनुभवी महापुरुष ने सूचित किया कि, 'तू चैत्र मास में कोई सचमुच एकांत स्थान में जाकर, पर्वत की एकांत जगा में जहाँ जलाशय हो वहाँ शिला पर कड़ी धूप में बैठकर यह साधना तू कर और तेरे दिल में भावना तो है इसलिए तुझे उस साधना से जो लाभ मिले वह तो अनोखा होगा। यह तुझे अनुभव से समझ आयगी।

इससे उस सूचन स्वीकार लिया और किसी स्था में सब करके यदा है वहाँ तक नर्मदा माता का ही प्रदेश था, वहाँ बारह बजे से एक गरम ही शिला पर बैठ जाता और बैठने की जगह से तीन फूट आगे डेढ़ पूट ऊँची और दो फूट चौड़ी ऐसी २१ उपले की धूनी। उसके बाद दूसरी तीन फूट दूर ऐसी दूसरी २१ उपले की धूनी और उसके बाद के दूसरे तीन फूट के अंतर पर तीसरी २१ उपले की २१ धूनी वर्तुलाकार में बनाई थी। इस तरह ६३ धूनी जलाकर बैठता। ग्रीष्म का चैत्र मास का प्रखर ताप और शिला पर नग्न शरीर से बैठ़ना और वह लगभग पाँच-साढ़ें पाँच घंटे तक साँय पाँच बजे तक बैठा रहता। वह समय भावावस्था, ध्यानावस्था में अपने-आप जाता। भजनकीर्तन करता तब भावावस्था हो जाती।

इस शरीर में भी जो अनेक प्रकार का मल है और जैसे वह मलशुद्धि साधना के लिए अनिवार्य है वैसे शरीर के अनेक करणों की

शुद्धि— चित्त की शुद्धि, प्राण की शुद्धि, संकल्प की शुद्धि— ये सभी शुद्धिओं की साधना में जैसे अनिवार्यता है वैसे इस शरीर के रोमरोम की मलशुद्धि होनी आवश्यक है। और वह मल पसीना द्वारा ही निकल सकता है। शरीर में से पसीना निकलता है यह प्रकृति ने हमारे शरीर में रखी प्रक्रिया हमारे शरीर की यथायोग्यता बनी रहे उसके लिए रखी है। उसका भान हमारे लोगों को बहुत कम से कम है। आज एक ऐसे प्रकार का समय आया है कि जब दवा बिना मनुष्यों को चैन नहीं पड़ता। विशेष करके शहरों में बातानुकुलित स्थानों, पंखे घुमते और शरीर को अनेक प्रकार की वायु की लहरों की बीच में ऐसी तरह से जो जो लोगों को पसंद हो गया है, यह शरीर के आरोग्य के लिए उत्तम प्रकार की हकीकत नहीं है। भले आज इस सत्य हकीकत मानते न हो। उनके गले इस हकीकत कभी नहीं उतर सकेगी किन्तु शरीर में से पसीना निकले या तो शरीर का पसीना जितना अधिक से अधिक निकले यह शरीर के आरोग्य के लिए उत्तम प्रकार की हकीकत है।

इस तरह नग्नावस्था में तपी हुई शिला पर, आगे-पीछे ६३ धूनी जलती हो उसके बीच में पाँच-छ घंटे तक बैठना होता। इससे शरीर में से बहुत पसीना निकलता। उसे ऐसा मानता कि यह भी एक प्रकार का मल शरीर में से निकल जाता है, ऐसी दृढ समझ थी और उस समय के अंदर भी सख्त ताप के बीच चित की अवस्था तो भावना में ही रहा करती। सतत प्रार्थना, भजन, स्मरण ध्यान इन सब में लीन रहता। और भजन गाते गाते जो भावावस्था हो जाती वह कितने समय तक चला करती।

वह पूर्ण होने के बाद ऐसी व्यवस्था की थी कि दो आदमी नीम के कोमल कोमल जो पत्ते होते वे सब पीस कर उसका रस एक आदमी एक कटोरे में निकाल लाता और दूसरा आदमी दूसरे कटोरे में निकाल लाता और उन्हें इसके लि पैसा देता और बाद में धूनी में से बाहर निकल कर दो रूमाल से पूरा शरीर पौंछता। तब उन दिनों में स्नान नहीं करता और उस नीम का रस धीरे धीरे, सीप (sip) करता, थोड़ा थोड़ा

पीता । जैसे की खाते हों ऐसे बारी बारी पीता और पूरा करता । वही खुराक और वही पानी । उस २८ दिन की साधना में कभी दूसरा खुराक लिया नहीं । पानी भी नहीं पिया । ब्रह्मचर्य के पालन के लिए बहुत उत्तम से उत्तम साधना की रीत है ।

साधना ऐसे ही हो सके, इसमें विधिनिषेध नहीं है । भगवान के प्रति एकसा चेतनपूर्ण जीता–जागता एकनिष्ठ भाव अगर हो यही बड़ी से बड़ी हकीकत है । यह भाव यदि हमारे दिल में प्रगटा हुआ जीवंत रहा करे तो दूसरे कोई साधन की आवश्यकता नहीं और यह भाव विकसित करने के लिए या तो चेतनपूर्ण अपने–आप सतत बहा ही करे उसके लिए अनेक अलग–अलग प्रकार की साधना का आश्रय लिया है ।

● ● ●

॥ हरिःॐ ॥

२. दैवासुर संग्राम

१९२२ (वसंतपंचमी) साधना की शुरुआत हुई थी। इधर-उधर चार वर्ष हो गये। फिर तो एक ऐसी भयंकर वासना passion पैदा हुई कि तुम्हें किसी को कल्पना न आये। इतनी भारी passion (वासना) कि कोई शुमार नहीं। ध्यान-ब्यान दूसरा सब अच्छा होता। एकाग्रता अच्छी होती थी। एक और यह चला करे और दूसरी ओर यह सब। इससे मुझे हुआ कि ये दो कैसे हो ? यह तो दंभ कहलाएगा। एक और मेरी एकाग्रता इतनी सुंदर हो कि भजन गाते गाते मुझे भावावस्था भी हो जाती। ऐसे दो वस्तु का मेल कैसे हो ? मैंने बहुत विचार किया। बहुत बुद्धि चलाता। किन्तु इसका कोई हल न खोज सका। हमारे (नड़ियाद में) स्मशान में तालाब है। वहाँ इतने (कमर उपर के) पानी में पूरी रात खड़ा रहता– पूरी रा...... त ! और भजन बोला करता। और पूरे दिन के समय में इन्द्रिय के भाग पर गीले पोते रखा करता और बार-बार बदलते रहता। ठंडा पानी से नहाता, कम से कम एक ही समय खाता। तेल-घी सब छोड़ा; मिर्च छोड़ दिया, नमक छोड़ दिया। फिर भी ठिकाना नहीं होता। यह तो अचानक इनता बढ़े कि शुमार बिना की बात।

मुझे हुआ कि अब गुरुमहाराज के पास गये बिना नहीं चलेगा। इतने में हरिद्वार में कुंभमेला लगने का था। इस साल लगा ही। वह १९२६ की साल थी। मैंने सोचा कि ये बालयोगी महाराज को कहाँ ढूँढना ? गुरुमहाराज (धूनीवाले दादा केशवानंदजी) तो कुछ जवाब न दे ऐसे थे। नग्न, अवधूत किन्तु ये बालयोगी मुजे जवाब दै। तो साधुओं का मायका कुंभमेला। इससे मैं तो कुंभ मेले में गया। लंबी बात है किन्तु (आज तो) संक्षिप्त कर देता हूँ। बाद कल-बल फिर से विस्तृत में

करेंगे । किन्तु मुजे जो मूल कहना है वह यह कि जो इतनी सब वासना का पूर आया था— पूर से भी प्रचंड पूर कह सकते— भयंकर पूर— हमारी तापी नदी में आया था उससे भी भयंकर पूर । उसके सामने मेरा भजनकीर्तन, प्रार्थनाध्यान यह सब चलता । मैंने साधन नहीं छोड़े थे, किन्तु ये दो प्रवाह आते— और तब मुझे कुछ पता नहीं— मैं कुछ जानता नहीं । मैंने कुछ शास्त्र पढ़े नहीं थे— गरीबी में जन्मे थे । इससे कथावार्ता भी कुछ सुनी नहीं थी कि जिसे गीता में कहा है वह दैवासुर है । देव और असुर दोनों का संग्राम । दोनों साथ-साथ और संग्राम होता । वे दो साथ हो तब संग्राम न हो ? एक हो तो कैसे संग्राम हो ? उसमें से विजय मिले तब सही ! यह दैवासुर संग्राम है, उसका मुझे उस समय कुछ पता नहीं । इसलिए हमें हुआ कि अब तो हमें जाना ही चाहिए ।

कुंभमेला साधुओं का मायका । इसलिए मुझे हुआ कि अविनाशी महाराज (बालयोगीजी) वहाँ मिलेंगे । इससे पीछे मैं कुंभमेले में गया । कुंभमेले में हमारे नड़ियाद के एक भाई— परभुलाल मामा— गये थे । ऐसे तो बहुत दूर से सगे होते थे । इससे उनके घर से मुझे रुपये दिये कि इतने रुपये तुम उनको दे देना । पहले तो मैंने ना कहा कि भैया, मेरा कुछ ठिकाना नहीं होता और पैसे-बैसे चोरी हो जाय तो मैं कैसे दे सकूँ ? फिर गरीब आदमी का कोई मानता नहीं । व तो ऐसा ही अर्थ करते कि उसने पैसे ले लि होगे । इसलिए चोरी हो गये या खीसा कट गया ऐसी बात करता है । मेरी माने मुझे उलाहना देते कहा कि...... इतना तेरे से किसी को संभाल के नहीं ले जा सकता ? किसी का इतना भी काम तेरे से नहीं होता ? इससे बाद में किले पर मेरा खीसा कट गया और वे सब पैसे गये । मेरे भी गये और उनके भी गये ।

कुंभमेले में खाने की चिंता ही नहीं । ढेर खाना मिला करे । मालपूआ, खीर और जलेबी और .... ऐसे कतार में खड़े रहो और तुम्हें मिला करे । जितनी बार खाना हो, उतनी बार खाओ । इससे खाने की तो कोई पंचायत नहीं । सस्ता साहित्य वाले स्वामी अखंडानंद

थे । उनके साथ मेरा बहुत परिचय हुआ था । उसका वहाँ मुकाम था । वे रास्ते में मिल गये, कहे कि, ‘अबे चूनीलाल, तू यहाँ कहाँ से ?’ मैंने कहा, ‘ऐसे भटकते भटकते आया हूँ । रहने का कोई ठिकाना नहीं है ।’ इससे कहा, ‘चल मेरे साथ ।’ मुझे उन्होंने कहा कि, ‘यह तेरी जगह ।’ जगह यानी सो रहने जितने दो फूट जगह दी । मैंने कहा ‘अभी तो मैं एक साधु को ढूँढने आया हूँ ।’ उन्होंने पूछा, ‘कौन है वह साधु ?’ मैंने बताया, ‘बालयोगी अविनाश महाराज है ।’ ईससे कहा, ‘कौन ? दस जाति के साधु कहते है, गिरि— फलाना— तो ये कौन है ?’ मैंने कहा कि, ‘यह मैं कुछ जानता नहीं ।’ इससे कहा कि, ‘तो तो मिलना कठि़न । ऐसे पता-बता लगे नहीं ।’ मैंने कहा, ‘भले मैं तो भटकेगा ।’ मेरा सामान वहाँ रखा और भटका । चार दिन तक भूखा और प्यासा भटका ।

मन में प्रार्थना करता कि हे प्रभु ! तुम अब दर्शन दो— मिल जाओ । कितना मुश्किल— उलझन है । इससे तुम्हारी पास आया हूँ । तुम्हें मिलने कितनी छटपटी मुझे है । भूखा और प्यासा भटका करता हूँ । तो हे प्रभु अब दर्शन दो । प्रकट हो जाओ ।

कहाँ पड़े होगे उसका हमें क्या पता ? अब कौन गिरि कहलाये— फलाना कहलाये— यह सब जानता नहीं । उनके गुरु केशवानंद धूनीवाले दादा कहलाते है, उनके वे शिष्य है ऐसे बहुत जगह पूछा करता किन्तु ठिकाना नहीं मिलता । फिर एक ठिकाने जाते जाते मेरी ऐसी नजर पड़ी तो तो सामने ही दिखे । ओ बाबा रे बाबा ! मैं तो वहाँ जाकर पैर पड़ा— साष्टांग दंडवत् प्रणाम किये और उनके पैर पकड़कर रोया— क्या रोया । बाद कहा, ‘साला, मैं तो तुझे यहाँ जाने बहुत बार देखता था ।’ मैंने कहा कि, ‘मुझे बुलाया होता तो ?’ तो बोले ‘नहीं बुला सकता । जब तू मेरे सामने नहीं देखता तब तक सब बेकार । मैं तेरे सामने देखुं यह काम नहीं लगता । तू जब सामने देखे यानी कि Responsive और Respective ये दोनों चाहिए— साथ साथ । ये न हो तब तक कुछ ठिकाना नहीं होता । तू मेरे सामने देखता नहीं तब

तक सब बेकार ।' किनतु तब तो हमें समझ में न आया था यह वाक्य । आज मुझे समझ आयी है कि उसकी बात तो सच्ची थी ।

मैं तो उनको बहुत बोला कि, प्रभु आप को इतनी दया नहीं आयी कि चार–चार दिन से मैं भटका करता था । आपको ढूँढने व्यथित हो गया छा । आप मुझे देखते थे फिर भी आपने मुझे बुलाया नहीं । तब तो मुझे मन में बहुत दुःख हुआ था कि मेरे बेटे ये साधु–लोग तो घातकी है । एक ओर तो मैं उनके पास सिखने गया था । तो मेरे मनमें उनके लिए कितना आदर और भक्ति चाहिए । और (वैसा हो) तो ही हमें (विद्या) मिले या ऐसे को ऐसे मिले ? ऐसे मेरी बुद्धि तो गलत गति से सोचती थी, किन्तु तब मुझे ऐसा नहीं लगा था । बाद में उन्होंने मुझे कहा कि जा तू गंगाजी में नहाकर आ । मा (गंगाजी) को पैर पड़कर नहाना– प्रार्थना कर के । हम तो पैर पड़े । कहे अनुसार करने की– बरतने की आदत तो पहले से सही ।

प्रार्थना करके (गंगाजी में) नहाया । फिर थोडी देर बैठ़कर भगवान का भजन किया । इससे बुद्धि थोडी शांत हुई । वह जो उछाला था उसका शमन हुआ– शांत हुआ । मैंने विचार किया कि इस गुरु महाराज के प्रति मेरा वर्तन योग्य न था । उन्हों ने मुझे क्यों नहीं बुलााय उसका खुलासा तो उन्होंने दे तिया कि जब तक तू मेरे सामने देखे नहीं तब तक सब बेकार । अब मुझे वे सामने दिखे नहीं तो मैं किस तरह उनके सामने देखुं ? किन्तु मैं यहाँ उनके पास सिखने आया हूँ– मेरी मुश्किल का हल निकालने आया हूँ । इससे उनके प्रति मेर`में आदर या भक्ति न हो तो यह कैसे चले ? इससे मैं तब मेरे अपने मन को कहने लगा कि यह तेरा वर्तन योग्य नहीं है । बाद तो मैं समझा । इससे फिर वापस जाकर रोया और कहा कि प्रभु– माफ करना । मेरी यह असभ्यता, उच्छृंखलता माफ करना । इससे वे बोले कि, 'तू क्यों आया है, वह सब मैं जानता हूँ । 'किन्तु यहि जानते हो तो प्रभु ! भटकाया किस लिए ?' तो बोले, 'तपश्चर्या तो करनी ही पड़ती ।'

यह तो मथना मानो । स्वयं मरे बिना स्वर्ग नहीं जा सकते है । फिर

बोले तू आया यह अच्छा हुआ। अब मैं तुझे सब साधन दिखाउँ। उसके अनुसार तू कर। यह हमारी नाभि है, उससे चार अंगुल नीचे उसका केद्र है। उस केन्द्र पर एकाग्रता करनी। चित्त को हमें जहाँ खिसकाना हो वहाँ खिसक सके ऐसी शक्ति हमारे में आ जायतब ऐसे साधन हो सकते हैं। ऐसे के ऐसे नहीं होते। इससे नाभि से चार अंगुल नीचे जहाँ उसका केन्द्र है— यानी जहाँ हमारी इन्द्रिय है, उससे थोड़ा उपर, वहाँ उसका केन्द्र है। उस केन्द्र पर एकाग्रता करके प्रार्थना करने की। यह सब उन्होंने मुझे सिखाया था सही। (किन्तु तुम्हें) कहना निरर्थक है। चंदन के तेल से उसके पर अमुक आकार करने होते। मैंने इस प्रकार लगभग छ–सात दिन साधना की। मैंने यह साधना की तब इतना मशगूल— इतनी गहरी भावावस्था हो गई थी कि मुझे कोई बाह्यभान न रहा था और सब जाहिर में। कुंभ मेले के समय में इतन सब— असंख्य मनुष्यों हो (फिर भी) मैं वहाँ बेठा रहा और जाहिर में। खुला (बिलकुल नग्न) होकर यह सब विधिपूर्वक करता तब मुझे कोई प्रकार का संकोच न था। और सात दिन हुए बाद वह सब तो अदृश्य हो गया। जिस हेतु के लिए आया था वह तो (फलित हुआ हो ऐसा) लगा। और ये जो वासना के प्रचंड पूर आये थे वे तो सब विलीन हो गए।

बाद में मुझे हुआ कि यह तो अद्‌भुत काम हुआ। फिर पुनः मुझे एक विचार आया कि साला, अब यह परिपक्व हुआ है कि नहीं उसका सबूत क्या ? हमें सबूत होना चाहिए। परिपक्व हो तब हमें भरोसा होना चाहिए। फिर तो सात दिन हो गये और अंत में यह विचार आया। इससे गुरुमहाराज के पास आया। पैर पड़ा। (वे बोले) यह अब तुझे आ गया ! यह तेरी सिद्ध हुई है। अब तुझे इसका सबूत चाहिये न ? (मैंने हा कहा) क्योंकि मुझे (मेरे) गुरुमहाराज कहते कि प्रयोग बिना कुछ नहीं। क्योंकि उसमं से कोई भी परिस्थिति आये— कैसी भी कामना जागे— वासना जागे ऐसी परिस्थिति— संयोग (हो) फिर भी वह जागे नहीं तब सच्चा कह सकते। इससे वे कहते कि 'यह तो गुरुमहाराज के हाथ की बात है। यह कुछ मेरे हाथ की बात नहीं।'

मैं तो वहाँ दो दिन रहा । दूसरी सेवा की । वे पग-बग तो दबान देते नहीं । कपड़े—बपड़े धोने के थे वे धो देता । अधिक थे नहीं । थोड़े होते वे धो देता । कुछ खाने को कहते तो ले आता । मेरे पास पैसे तो थे नहीं । इस लिए भंडार में से ले आता । मिट्टी का एक सकोरा खरीद कर लिया था । प्रतिदिन ताजा ही (सकोरा) लेता । क्योंकि एक बार जिसमें रांधा हुआ अन्न आ गया तो फिर वह नहीं चलता । साधु लोग उसे गंगाजी में डाल दे । दूसरी बार दूसरा नया ले आता । एक बार ले आता । पूछ लेता कि क्या लाउँ ? कहते, 'जो मिले सो लाओ ।' तो कोई बार जलेबी लाता, पेडा लाता, बुंदी के लड्डु लाता, मालपूआ ले आता । कोई बार मालपूआ और खीर लाता । तो खीर तो सकोरे में लाता और मालपूआ हाथ धोकर हाथ में लाता । उनका प्रसाद लाता हो, तब हमेशा नहाकर ही जाता ।

● ● ●

बाद में एक दिन जब मैं गंगा के किनारे बैठा था और गंगामाता की प्रार्थना करता था, तब गंगा पर मुझे .... से बहुत भाव-आदर । नर्मदा पर और गंगा पर मैंने काव्य लिखे हैं । 'नर्मदापदे', 'गंगाचरणे' छपे हुए है । और तब काव्य में तो नहीं पर मैं उस गंगामैया को प्रार्थना करते गाता रहेता सही । गंगा पर मुझे बहुत आदर भाव । एक बहुत बड़े भक्त और ज्ञानी हो गये— कालिदास । वह कवि कहलाते है । वे भक्त नहीं कहलाते, ज्ञानी नहीं कहलाते पर जगन्नाथ कवि हो गए, वे भक्त थे । वे कवि जगन्नाथने 'गंगा' पर लिखा है । उसका नाम 'गंगालहरी' । उसका निमित्ते इस प्रकार हुआ कि उसकने ज्ञाति में विवाह नहीं किए थे । इससे ज्ञातजनोने उसको ज्ञाति से निकाल दिया था । इससे उसने सभी को कहा कि यह ठीक नहीं है, भाई । तुम मुझे ज्ञात में ले लो । तो कहा एक शर्त पर— उसने खुद ही कहा । जगन्नाथने कहा कि देखो इस गंगा के किनारे मैं बैठता हूँ । इतनी सीढीयाँ हैं । और मैं गंगा की प्रार्थना करता हूँ— स्तुति करता हूँ । एक श्लोक हो इतने में गंगामाता एक सीढ़ी उपर आयेंगे । ऐसा हो तो तुम मुझे ज्ञाति में लो । सभीने कबूल किया और

स्वयं बैढते हैं। 'गंगालहरी' संस्कृत में लिखी हुई है। इसे बहुत लोकप्रिय माना जाता है। तब मुझे यब भी विचार आया था कि कहाँ जगन्नाथ और कहाँ (मैं) मामूली आदमी ! तो मैंने कहा कुछ भी हो, हमें तो हृदय के उद्गार है उसे निकालना है। इस के उपर से नंदुभाई के साथ यात्रा में गया था, तब मैंने यह 'गंगाचरणे' लिखा था, और अनंतराय रावल– हमारे गुजराती साहित्य के बहुत उग्र विवेचक और बहुत प्रसिद्ध व्यक्ति– बहुत आगे बढ़े हुए– उन्होंने उसकी (गंगाचरणे की) प्रस्तावना लिखी थी और ऐसा ही 'नर्मदापदे' लिखा है। ये दोनों नदीओं के लिए मुझे बहुत आदर।

● ● ●

जहाँ मैं गंगामाता की प्रार्थना करता हूँ वहाँ दो पूर्ण यौवनशाली संन्यासी (स्त्री)– भगवे कपड़े– वस्त्र पहने हुए आए ! (मेरी) पास आने लगे और वे कुछ गाते। वे क्या गाते थे और कौन भाषा में गाते थे, वह मुझे समझ में नहीं आया था। आज भी समझ में नहीं आया, पर कुछ गाते थे। कोई भजन गाते होंगे। ऐसे करते एकदम निकट आये। फिर इस बाजू से ऐसे और एक दूसरी बाजू से ऐसे– पास-पास में आये।

.... और बाद में वे मेरे शरीर को स्पर्श करने लगे। ऐसे-तैस करने लगे। फिर तो उनके स्तन मुझे स्पर्श कराते और ऐसे सब चलता। इसके बाद में ऐक संन्यासिनी बहनने तो मेरी इन्द्रिय पकड ली और सरे-आम साहब ! ऐसे कोई निजी ठिकाने में नहीं ! इससे मैंने कहा कि साला, मानो न मानो ये कोई सामान्य व्यक्ति नहीं लगते। तब मेरी बुद्धि तो चले न ? मानो न मानो पर सामान्य व्यक्ति की यह ताकत नहीं है। कुछ भी हो किन्तु यह साला क्यों होता है ? किसलिए होता है ? वे कितना भी प्रयत्न करते फिर भी इन्द्रिय सीधी खड़ी नहीं हुई। इससे उस दूसरी बहनने कहा कि ये तो साला नपुंसक है। मैंने कहा कि भई नपुंसक नहीं, यह तो गुरुमहाराज की विद्या है। नपुंसक नहीं हूँ। तो तुझे देखना है ? ऐसा कहकर मैंने मेरा संयम था– उस संयम को थोड़ा

ढीला करके भगवान को प्रार्थना की कि 'इसे सच दिखाओ !' उसके बादमें वह भी उसे बताया । पर उसके पूरे प्रमाण में नहीं, अन्यथा पंचायती हो जाती । फिर मैंने तो प्रार्थना की । उनके पैर पड़ा कि, 'प्रभु ! आप क्यों पधारे हो ? ये सब का कारण क्या है ? ये सब लीला का कारण क्या है ?'

इससे वे बोले, साला, तुझे पता नहीं ? उन्हों ने मुझे दोचार चुपड़ा (गालियाँ) दी । बोले, तूने प्रार्थना नहीं की थी ? मैं तो भूल गया था । इससे मैंने पूछा, कौन सी प्रार्थना ? मैंने कहा प्रार्थना की नहीं है । इससे बोले क्या बात करता है तूँ ? फिर से मुझे दो-चार चुपड़ा (गालियाँ) दी । एक बहनने तो मुझे मारा— मुझे धौल मार दी । मैं पैर पड़ा । उन बहनों के कपड़े उनका रूप देखे तो साहब चकित हो जाँय । मुझे साला कुछ याद न आया । बाद में जिसने मुझे मारा था उसने नहीं पर दूसरी बहन बोली कि तू भूल गया ? गुरुमहाराजने तुझे यह विद्या सिखाई, तब तेरे मन में हुआ था कि इसका प्रमाण क्या ? यह सिद्ध हुआ कि नहीं ? ऐसा तुझे हुआ था कि नहीं ? इससे मैंने कहा कि हाँ ऐसा हुआ था । और गुरुमहाराज बोले कि तुझे प्रयोग चाहिए न ? साबित करना है ? मैंने कहा हाँ, मैंने कहा था । इससे वे बोले कि गुरुमहाराज ने हमें भेजे थे, जाँच करने— तेरी साबिती करने । मैं उनके पैर पड़ा । भगवान की कितनी बड़ी कृपा कि उसके बाद में दोचार घटनाएँ हुई थी । वहां नहीं, हरद्वार कुंभमेले समय में नहीं पर कुंभमेले बाद दो-चार साधुओं के दर्शन करने मुझे कहा था ।

वे बालयोगी महाराज तो वहाँ से खिसके नहीं थे । वे तो वहाँ आसन पर बैठे बैठे ही । आसन कभी छोड़ते नहीं । मैं वहाँ था, उतने दिन तो मैं उनके लिए खाना ले आता । पर बाद में तो एक बार मैंने उनको कहा कि प्रभु ! आप यह सब खाते-पीते हो और आप जाज़रू तो जाते नहीं, मैं ये दो कुंडे उसके लिए लाया हूँ । आप को जाना हो तो इन कुंडे में कर लिजीए । मैं दूर जाकर जहाँ सभी जाकर जाज़रू करते हैं, वहाँ जाकर डाल दूंगा— साफ कर दूंगा और कुडे गंगामाता में

डाल दूंगा । बाद में दूसरा नया कुंडा ले आयेगा । पेशाब करना हो तो करो । पर वे तो बोले कि कुछ जरुरियात नहीं है, वह तो सब भस्म हो जाता है । कौन सा अग्नि उन्होंने कहा ? वड़वानल अग्नि ? वड़वानल बोले थे, वैश्वानर नहीं । वैश्वानर तो हमारे गीता में आता है । **'अहं वैश्वानरो भूत्वा ।'** (१५/१४) ऐसा करके आता है, पर यहाँ वैश्वानर नहीं बोले थे । मुझे बराबर याद है– वड़वानल । वे तो ऐसा कहते कि सब भस्म हो जाता है । इसके बाद में उन्होंने मुझे अमुक महात्माओं के दर्शन करने कहा था । मैं दर्शन तो करके आया था । इसके अनुसंधान में यह साधना सिखाई ।

● ● ●

ऐसा जब हुआ तब मेरे गुरुमहाराजने मुझे उसके कारण के बारे में एक बात कही थी । उन्हों ने कहा था कि तू जब बहुत छोटा था । पालने में सोया था, उस समय तेरे घर में अन्य कोई न होने से कामातुर ऐसे दो जन– एक स्त्री और एक पुरुष– संभोग करते थे । उस अरसे में तेरे जाग जाने से तुझे सोया हुआ रखने उस स्त्रीने पालने की डोरी द्वारा उनकी उस क्रिया दरमियान तुझे झूलाया था । फिर मुझे कहा था कि साबिती करनी हो तो तेरी माँ को इसके बारे में पूछ लेना । मुझे उसके संस्कार पड़े थे ।

उसके बाद मन में बहुत शर्मिन्दा होकर मेरी मा को इसके बारे में पूछा था । मेरी माने मुझे कहा था कि एक बार तुझे पालने में सूलाकर मैं पानी भरने कुएँ पर गई थी । जब मैं वापस आई तब अपने घर के कोने में से एक स्त्री और पुरुष बाहर निकले थे । उसे समय उनको मैंने कहा था कि इस तरह हमारे जैसे गरीब के घर में तुम्हें नहीं आना ।

इस बात पर से मेरे गुरुमहाराजने कहा प्रसंग की साबिती हुई थी ।★

● ● ●

(★ पूज्य श्रीमोटा के पास से सुनी हुई कहीकत है ।)

॥ हरि:ॐ ॥

३. अद्‌भुत अनुभव

हेमंतभाई और मैं एक ही क्षेत्र में– हरिजनसेवा में– काम करते थे । यह चूनीलाल भगत कुछ मथन करते है, इतना ही वे सब जानते थे । परीक्षितलाल ऐसा समझते थे । ठक्करबापा भी ऐसे ही समझते थे पर उसका पूरा कोई जानते नहीं थे । बाद में– १९३८ की साल बाद– इन सब के साथ कुटुंबो में मुझे हिलना-मिलना हुआ । उसके बाद ये सब मुझे साधना के लिए जुड़े– ये नंदुभाई और दूसरे सब ।

तब पीछे मुझे ऐसा हुआ कि, 'साला ये कुटुंबो में मिश्रित होने ये साली इन्द्रिय की पंचायती है । उसका नश्तर ही करा दें तो कैसा ?' ऐसे तो मुझे भरोसा था कि अब इसमें कुछ है नहीं । ऐसी उसने साधना करा दी थी । बिलकुल निष्क्रिय लगे । कितना भी प्रयत्न करें तब भी होता ही नहीं । कोई बार किसी को दिखाने– समझाने ऐसा हो । उन संन्यासिनीओं को जब हुआ था कि नपुंसक है, तब थोडा उसका आकार बदला था । वह भी भगवान की कृपा से । अपने से कुछ इस तरह नहीं हो सकता । यह तो **उस** की कृपा से हो ।

तब मुजे ऐसा हुआ कि नश्तर कर दें । इससे उसके लिए मैं कराची जाउँ । मैं बहुत बार बार कराची जाता था । वहाँ मेरे बापु (प्रिय स्वजन) । मेरी साधना दरमियान एक महीने की छुट्टी लेकर जब मैं जंगलों में चला जाता, तब पूरा खर्च मुझे वे ही भेज देते थे । टेलिग्राम से पैसे भेज देते । तब मुझे हुआ कि अब वहाँ कराची जाकर ही नश्तर करायें । पैसेवाला आदमी है, इससे वह हमें सब सुविधा देगा । वे सिंधिया स्टीम नेवीगेशन के मेनेजर थे । मैं वहाँ गया । तारीख निश्चित हुई । कमरा निश्चित हुआ । वह सब निश्चित हो गया । दूसरे दिन सुब जाना था ।

पहले तो डाक्टर सब अचंभित हुए कि किस लिए ऐसा इन्द्रिय का ऑपरेशन कराना चाहते हो ? इसलिए मैंने अंग्रेजी में डॉक्टर को सब समझाया कि इस कारण से । डॉक्टर समझ गए कि इस लड़के की बात ठीक है । और वे मेरे बापु साथ थे, उन्हों ने भी कहा कि इसकी बात सच है । मेरे घर में मेरी दो बेटी हैं । एक बी.ए. में पढ़ती है, एक इन्टर में पढ़ती है, पर हमें तो अपने एक कुटुंब है । इस लिए हर्ज नहीं, किन्तु इसको अनेक कुटुंबो के साथ मिलना है । इससे कहता है कि ऐसा हो तो अच्छा, इससे वे डॉक्टर असहमत हुए थे । अच्छे सर्जन थे । वे कहे कि तुम्हें कोई प्रकार की तकलीफ नहीं होगी । यह तो थोड़ी देर का ही काम है । इसमें हड्डी-बड्डी नहीं होती है । यह तो मसल ही हैं खाली उसे काटकर हम सी लेंगे । और पेशाब जाने के लिए सूराख रखेंगे । थोडा समय नस के अंदर ट्युब रख देंगे । इससे तुम्हें पेशा जाने में बाधा नहीं आयेगी । और दसबार दिन में तो तुम फिर स्वस्थ हो जाओगे । यह सब निश्चित हो गया था ।

अब, उस रात को मैं तो प्रार्थना आदि मेरे जो साधन किया करता था, वे करता था । बैठा था वहाँ एकदम फुरुरुरु करते मानो पक्षी उड़कर पास आकर नहीं बैठते ? उस तरह गुरुमहाराज आये । मैं तो पैर पड़ा । आँख खोलकर देखा ओ हो हो ! गुरुमहाराज ! मैं पैर पड़ा ! 'अरे प्रभु ! क्यों पधारे ? कल मुझे तो ऐसा काम कराना है ।' तो वे बोले कि वह क्या साला ऑपरेशन करेगा । मैं ही ऑपरेशन कर देता हूँ । मैंने कहा कि करो प्रभु । तो तो मैं बहुत राजी हाऊँ । मैंने कहा कि मुझे बापु को बताना पड़ेगा । तो बोले बापु को या किसी को नहीं बता सकते । मैं ऑपरेशन करता हूँ । यह तुझे पता देता हूँ । वहाँ तू जाना— होटल में । और वहाँ दवा करना । मैं कह देता हूँ । और देख अभी रात के तीन बजे हैं । इससे वहाँ डॉक्टर के वहाँ पाँच बजे जाना । मैंने बोल दिया है । वह तुजे साबिती मिलेगी न ? अब उन्होंने तो मुँह से ऑपरेशन किया, खून तो बहुत निकला । बाद में कहा कि ये सब पिंडे-बिंडे है तू रखना, बांधकर रखना । अब तीसरे दिन सिंधिया की स्टीमर में तो

तुझे कराची से मुंबई जाना था। हमारे लिए स्पेशियल केबिन थी। इससे गुरुमहाराज बोले कि देख, सागर के बीच में मैं आऊँगा, तब यह सब ले जाऊँगा– तब साफ हो गया होगा। घाव-बाव कुछ नहीं दिखेगा। थोडा सा, नहीं जैसा दिखेगा। साहब मैं तो संभालकर ले गया था। मैं तो राह देखा करता। कहा था इससे हमें सावधानी रहती न ? बात में तो वे मध्य समुद्र में आये और वह सब ले गए और सब साफ हो गया था।

• • •

॥ हरिःॐ ॥

४. प्रभुकृपा की प्रसादी

किन्तु तब से मानो कि यह व्रत पक्का हो गया था । किन्तु उसके बाद भगवान की कृपा से यह प्रोस्टेट का दर्द हुआ न ? उसके कारण इन्द्रिय को बहुत पंचायती होती है । कभी कभी तो अब खून भी पडता है । अभी मैं अहमदाबाद अरे बड़ोदरा गया था । अंदर कुल्हिया (गुदा का भाग) कहते हैं न कुल्हिया में गाँठ हो गई है । वह गाँठ ... से भी बड़ी हुई है और दरद नहीं करती पर सखत है । जहाँ से मल निकलता है उसकी *सरफेस* पर भी दो गाँठ हुई है । एक चने जितनी और एक मूँग जितनी है । पहले वह दरद न करती थी । अब दरद होता है । इससे अब वहाँ वडोदरा में बड़े प्रसिद्ध *सर्जन* है । जैसे हमारे यहाँ सुरत में भट्टसाहब थे, ऐसे वे प्रसिद्ध । इससे मेरे साथ बहुत संबंध– जैसे डॉ. आर. के. (डॉ. आर. के. देसाई, सुरत के नामी हृदयरोग के निष्णात) साथ संबंध है वैसा ही संबंध– उसके लड़के का विवाह भी मेरे हाथ से कराया था । इससे यहाँ से सुरत से पत्र लिखा था कि हम यहाँ से मोटर द्वारा नडियाद जाते है, तो आप के यहाँ तिने बजे आयेंगे और तुरत ही मुझे देख लेना । उसके बाद में आगे जा सकूँ । और हम गए तब वे निवृत्त ही थे । दूसरे किसी को *एपोईन्टमेन्ट* नहीं दी थी । इससे तुरत ही देख लिया बाद में मुझे कहा, अबे मोटा ! ये *प्रोस्टे ग्लेन्ड* तो बहुत बढ़ गई है । आप कोई समय बेहोश हो जाओगे । इसका तो तुरत *ऑपरेशन* करना चाहिए । ये आप को गाँठे है वे तो मसा की है– खून जम गया है पर उसकी कोई बाधा नहीं है । यह कुछ केन्सर–बेन्सर है नहीं । ये मसा की गाँठे हो गई है । और उसने कहा कि प्रोस्टेट है वह बहुत पंचायती है ।

मूल बात इससे मेरे हेतु की थी । हरद्वार मेरे गुरुमहाराज के पास जाने का यह हेतु था । यह मेरी किताब में मैने लिखा नहीं है । (मैंने तो केवल इतना ही लिखा है) कि साधना में मुझे मुसीबत बहुत थी । उस मुसीबत का हल निकालने मैं हरद्वार में गुरुमहाराज के पास गया था, किन्तु मूल हेतु यह था । यह सब मैंने आपको बताया । हरिःॐ तत् सत् ।★

● ● ●

★ पू. श्रीमोटा की ध्वनिमुद्रित वाणी के आधार पर.